International Journal of Information Movement Vol.3 Issue IV (August 2018)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 29-34

# सर्वहारा वर्ग के संघर्ष बयान करता 'बयान': चित्रा मुद्गल का लघुकथा संग्रह

**डॉ. सुषमा ठाकुर**
**(संयुक्त प्राध्यापिका)**
**हिन्दी विभागाध्यक्षा**
**कुमारी विद्यावती आनंद डी.ए.वी. महिला महाविद्यालय, करनाल (हरियाणा)**
**Email- sushmakva97@gmail.com**

चित्रा मुद्गल ने हिन्दी की चर्चित कथाकार और उपन्यासकार होने के साथ–साथ लघुकथा लेखन में भी अपने सशक्त हस्ताक्षर स्थापित किए हैं । चित्रा मुद्गल जी की कहानियों और उनके उपन्यासों के माध्यम से यह सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि समाज के दीन–हीन, शोषित, सर्वहारा वर्ग के संघर्षों को वे सूक्ष्मता से अनुभव कर अपने पाठक को भी गहराई से उस सब का अनुभव करा देती हैं । सुनने में आता है कि लघुकथा में संवेदनीयता और प्रभावात्मकता की इस गहराई और सूक्ष्मता को छूना असम्भव है लेकिन अन्य कई श्रेष्ठ लघुकथाकारों की तरह चित्रा जी की लघुकथाएँ भी उपर्युक्त कथन का अपवाद कही जा सकती हैं । असल में लघुकथा एक अलग तरह की विधा है जिसकी तुलना कहानी या उपन्यास से करना उचित नहीं । यदि उपन्यास **'सूर्य'** के समान है और कहानी **'ग्रह'** तो लघुकथा आकाशीय बिजली की वह 'कौंध' है जिसकी ताकत और चमक को अस्वीकार नहीं किया जा सकता ।

चित्रा जी ने लघुकथा के विषय में कहा–''लघुकथा ने अपनी शक्ति का बोध अक्सर मुझे कराया है । ×× लघुकथा जब भी जनमी, कौंध सी जनमी । कौंध के साथ ही उसने अपना बुनाव–रचाव स्वयं रचा । मैंने उसे दर्ज भर कर लिया । ×× उसकी प्रहारात्मकता; उसकी लघु कद–काठी का अतिक्रमण कर उस अणु के समान होती है जिसकी क्षमता और शक्ति को लेकर, संभ्रम में रहना अपनी सीमाओं में सीमित होने जैसा ही है ।''[1]

चित्रा मुद्गल का पहला लघुकथा संग्रह **'बयान'** बिजली की कौंध का पर्याय ही कहा जा सकता है, जिसकी 29 लघुकथाएँ अपनी क्षमता, अपनी शक्ति और अपनी चमक का पूरा–पूरा अहसास जताती हैं । इनमें से शायद ही कोई रचना होगी जो या तो कोई प्रश्न न छोड. कर जाती हो या अपने जोरदार तमाचे से झिंझोड़ न जाती हो या फिर अपनी संवेदनात्मकता से हमारे अंतर्तम को भिगो न जाती हो । अधिकांश रचनाओं में समाज के कुछ कटु सत्यों पर व्यंग्य है तो इक्का–दुक्का में हास्य भी मिलता है । लगभग सभी लघुकथाएँ समाज के शोषित वर्ग के शोषण को बयां करती हैं या उसके पीछे के कारणों को कह जाती हैं, उदाहरण निम्नलिखित हैं–

**गरीबी की विवशताएँ :–** हमारे देश की जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे रहने वाला है । प्रत्येक नगर में एक बड़ा क्षेत्र ऐसा मिल ही जाता है जिसे **'स्लम एरिया'** कहा जाता है, जो उस शहर का अभिन्न अंग भी है, जहाँ की दुनिया शहर की होते हुए भी एक अलग दुनिया का आभास देती है । जहाँ अपनी तरह के अभाव हैं, भय हैं, झूठ हैं और झूठ के कारण भी हैं जो गहराई से समझने पर गुस्सा नहीं दिलाते, पात्रों के प्रति गहरी संवेदना (दया) पैदा करते हैं । **'गरीब की माँ'** कुछ ऐसी ही लघुकथा है । इसमें एक मालकिन को जब एक गरीब दम्पत्ति खोली का

किराया नहीं दे पाता तो वह उन्हें निकल जाने की धमकी देती है । मालकिन ने पुरूष की अनुपस्थिति में स्त्री पात्र को किराया न चुकाने पर खोली खाली करने की चेतावनी दी । मालकिन के धमकी देने पर उसने कहा कि पति की मॉ मर गई है, मुलुक को पैसा भेजा है । वह अपने पति को मालकिन से हुए संवाद के बारे में बताती है । "गाली बकने कू लगी । खंडुस शेन्ड़ी लगाता ... मेरे को? दो मेना पेला वो घर को आया, पॉव को हाथ लगाया, रोने को लगा–मुलुक में मॉ मर गया । आता मेना में शपथ, अक्खा भाड़ा चुकता करेगा, उधारी देगा । मैं बोली, वो पहले मॉ मरा था वो कौन होती? वो बोला, बाप ने दो सारी बनाया होता सेठाणी । ×× कल सुबू तक पैसा नई मिला तो सामान खोली से बाहर...

तु क्या बोली?

डर लगा मेरे को । बरसात का मेना किदर कू जाना? मैं बोली सेठाणी, मलप्पा झूठ नई बोला...

पिच्छू? ...

पिच्छू बोली– दो सादी बनाया तो तीसरा किदर से आया?

तू, तू क्या बोली? ...

मैं बोली ... दो औरत मरने का पिच्छू सासरे ने तीसरा सादी बनाया ।..."[2]

इस संवाद के साथ कथा समाप्त हो जाती है और एक प्रश्न कहीं अधर में टॅगा सा रह जाता है कि जीने की मूलभूत आवश्यकताओं के आगे क्या झूठ...? कितने छोटे लगते हैं ऐसे झूठ ...।

**ढोंग, दिखावा :–** इस विषय को लेकर लिखी गई लघुकथा **'भूखे–नंगे'** एक सशक्त रचना हैं जिसमें समाज के एक पक्ष का ढोंग और दूसरे की मजबूरी का मजाक उड़ता सा दिखाई देता है । अपने लाभ के लिए ( चाहे वह नाम की प्रसिद्धि का लाभ ही क्यों न हो ) कोई व्यक्ति या संस्था किस–किस तरह की तिकड़मबाजी लगा सकता है, क्या–क्या और कहॉ–कहॉ तक सोच सकता है, जानकर दिमाग सुन्न हो जाता है । कहानी में एक समाजसेविका को पचास–साठ लोईयॉ बॉटनी हैं और फोटो खिंचवाने हैं दीन–हीन, बेचारे, अभावग्रस्त लोगों के साथ ताकि उसकी परोपकारी संस्था का **'नाम'** हो सके । वह गरीबों के कई रिहायशी स्थलों पर जाकर देखती है पर पाती है कि वे अभावों में भी प्रसन्न हैं, रूखा–सुखा ही सही; खा–पी रहे हैं, कड़कती ठण्ड में आधे बाजू स्वेटर पहने मौसम को ऑखें दिखाते अपने कामों में व्यस्त और मस्त हैं, समाजसेविका कहीं भी **'बेचारे भूखे–नंगे'** लोग नहीं पाती जिनके दयनीय चेहरों के साथ फोटो खिंचवा वह समाज के बीच महान बन सके और देश–विदेश से सहायता प्राप्त कर सके । अन्ततः वह एक बस्ती में जाती है "वहॉ पहुॅच उनकी ऑखों की रोशनी दिपदिप करने लगी । सड़ान्ध–भरी नाली पर टिकी जर्जर झोंपड़ियों ने आश्वस्त किया । ईटों और पत्थरों से चॅपी झोंपड़ी के ऊपर की छावन बनी टुकड़ा–टुकड़ा तिरपाल, आरी–सी चल रही बर्फीली हवाओं में फड़फड़ा रही थी । ×× ऑखों में उमड़े ऑसुओं पर ऑचल दे उन्होंने एक झोपड़ी के भीतर झांका । कैमरे को निकट बुलाया । ×× तभी ईटों के ऊपर लपलप लपटें भर रहे चूल्हे को देख और चूल्हे के ऊपर चढ़ी खदकती हॉड़ी को देख उनका जी बैठ गया ।"[3] ... गरीब को सहायता पाने के लिए लाचार दिखना जरूरी है और सहायता करने वाले को सहायता पाने वाला जितना अधिक लाचार, बेचारा, दयनीय हालत वाला मिलेगा, वह अपनी सहायता को उतना ही अधिक भुना पाएगा । सहायता का विज्ञापन भला क्यों आवश्यक है? कभी समय था अधिकतर लोग गुप्तदान

करते थे और अब सोशल मीडिया पर पोस्ट डाले बगैर चैन नहीं, वह भी कुछ हद तक बुरा नहीं है, सम्भवतः उससे दूसरों को नेक काम करने का प्रोत्साहन मिले लेकिन किसी जरूरतमंद की मदद इसलिए की जाए कि उससे आप सुर्खियॉ बटोर सकें या अपना कोई बड़ा स्वार्थ सिद्ध करे सकें, यह तो निस्संदेह अशोभनीय कृत्य लगता है।

**धोखा, फरेब, झूठ :–** चित्रा जी ने अपने आस–पास फैल रहे इन भावों को बखूबी दिखाया गया है **'शहर'** लघुकथा में । यहॉ शहर को एक पात्र के रूप में, शोषक के प्रतीक के रूप में कल्पित किया गया है । लंगड़ा शहर एक दिन एक गॉव में बने मन्दिर के बाहर बैठे भिखारियों के बीच आया जिसे भिखारी स्वीकार नहीं कर पाए । छंगू मॅगते ने ऐलान कर दिया, " तू ठहरा टंग कटा, भक्तों का जी तुझी पर डोलेगा, हम लाचार हवा निगलेंगे ? कही मान तो पलक झपकते ही पलट ले ।'' ... चालक और धूर्त शहर ने पलटी मारी और भिखारियों को जता दिया कि वह तो किसी और काम से गॉव आया था पर यहॉ आकर भिखारियों की हालत देखकर उसे दया आ गई है । थोड़ी ही देर में लॅगड़ा शहर उन भिखारियों को यह यकीन दिलाने में सफल हो गया कि शहर में भीख मॉगने की स्थितियॉ बेहतर हैं, कमाई और जीवन स्तर भी बेहतर है तो सभी भिखारियों को वहीं चलना चाहिए । वह उनके लिए दिल्ली जाने वाली गाड़ी के टिकट की व्यवस्था करके रखेगा। आधे पैसे वे उसे दे दें; आधे वह मिला लेगा, दिल्ली में कुछ दिन कमाकर वे उसे वापस कर दें । बेचारे भिखारियों ने अपने–अपने बोरों के नीचे से अपनी–अपनी जमा–पूॅजी शहर के हाथ में रख दी, वह बोला, " तो ऽऽ । मैं चलता हूॅ । चलकर टिकट निकालता हूॅ । मय सामान तुम सब सूरज डूबने से पहले मन्दिर की सीढ़ियों के नीचे खड़े मिलना ।

दिन भर अनमने से वे सोचते रहे । कौन है उनका यहॉ गॉव में, जिसे छोड़ते हुए दुख हो? ×× तर माल खाएंगे, जमकर दिहाड़ी झारेंगे । भीख की खातिर कौन कम गलेबाजी करनी पड़ती है ।

मन्दिर के मंडप के नीचे खड़े–खड़े सॉझ अन्धेरे में डूब गई । अन्धेरा खर्राटे भरने लगा । शहर उन्हें लेने न पलटा ।''[4] ... धूर्तता ने सरलता को सदा से ऐसे ही ठगा है ।

**दोगलापन :–** आज के समाज में लोगों की असलियत जान पाना बहुत ही कठिन होता जा रहा है। लोग कहते कुछ हैं और करते कुछ और हैं । कथनी और करनी के अन्तर की सार्वभौमिकता पर चित्रा जी की कई लघुकथाऍ हैं जिनमें राक्षस, डोमिन काकी, सेवा, रक्षक–भक्षक नसीहत, मानदंड, मिट्टी, नाम आदि लघुकथाऍ प्रशंसनीय हैं ।

**'राक्षस'** में एक पिता अपने जवान शराबी पुत्र को शराब पीने पर खूब बूरा–भला सुनाते हुए **'राक्षस'** कहते हैं लेकिन बॉस के अपने घर पधारने पर अपने छोटे पुत्र से **'वाइन शॉप'** जाकर **'मुस्तैदी'** से **'ओल्ड मॉक रम'** लाने को कहते हैं तो बच्चा जिज्ञासावश पूछता है कि आपके साहब राक्षस हैं क्या? ... उसके इस प्रश्न पर ''तड़ाक!! बाबू जी का करारा चॉटा उसके गाल पर पड़ा । अब्बे, उल्लू के पट्ठे ... राक्षस कहता है उन्हें? अरे हमारे बॉस! हमारे अन्नदाता ...बाबू जी ने दॉत किटकिटाए ।''[5] ... बच्चों के सामने बड़ों का ऐसा दोगला आचरण लगभग प्रत्येक घर में घटित होता है, जो गलत है । 'डोमिनकाकी' भी इसी विषय पर खरी उतरती एक अन्य लघुकथा है । इसमें एक छोटी बच्ची अपनी दादी के गॉव आती है । एक दिन एक डोमिन के उनके घर आने पर वह चिल्लाकर दादी को उसके आने की सूचना देती है– ददिया, देखो डोमिन आई है । उसे इस बात पर चॉटा पड़ता है और दादी द्वारा समझाया जाता है कि डोमिन काकी कहना चाहिए । कुछ दिन बाद उसी डोमिन के कोंछ में अनाज डालते हुए बच्ची से कुछ मुट्ठी अनाज बाहर गिर जाता है तो बच्ची डोमिन के साथ मिलकर अनाज एकत्रित करवा देती है, इसपर उसे पुनः चॉटा पड़ता है और दादी गंगाजल डालकर उसे नहलाती है क्योंकि वह डोमिन से छू गई थी । ऐसे में बच्ची के सरल, भोले मन में कुछ प्रश्न उठना स्वाभाविक है । बड़ों का इस तरह का दोगलापन बच्चों को तो उलझाता ही है; सरल सीधे मनों में भी उलझन पैदा करता है, कुछ प्रश्न भी पैदा करता है जो अनुत्तरित रह जाते हैं । **'मानदण्ड'** भी

इसी विषय को टटोलती लघुकथा है ।

हम में से बहुत से लोग सच में कहते कुछ और है और जब वही स्वयं करने की बारी आती है तब हमारे विचार या तो बदल जाते हैं या हम पीछे हट जाते हैं । **'नसीहत'** हमीं में से बहुतों का सच बयान करती लघुकथा है । इसमें एक छोटे स्वस्थ लड़के को भीख मॉगते देख नायिका उसे कुछ काम कर लेने और भीख मॉगना छोड़ देने की नसीहत देती है । लड़का उसी के घर काम करने को राजी हो जाता है लेकिन तब नायिका कई बहाने बना उससे पीछा छुड़ाने की कोशिश करती दिखाई देती है । **'रक्षक–भक्षक'** में भी समाज की कुछ ऐसी ही कटु सच्चाई सामने आती है । जब एक भिखारीनुमा लड़का उस दानी स्त्री; जिसे खाने के पैकेट केवल लूले–लंगड़ों को देने हैं; गुस्से से कहता है " तुमहीच लोग गरीब लाचार का हाथ–पॉव तुड़वाता हय ... उसको अन्धा–लूला–लंगड़ा बनवाता हय ... दादा लोगों को मालूम हय, साबुत अंग वाले को कोई भीख नहीं देता ... उनपे दया नहीं करता ... तुम्हारी दया पे थू ...। घृणा से थूककर वह भीड़ को चरिता ऑख से ओझल हो गया ।"[6] भीख, दान, मदद देने की हमारी अजीब सी मानसिकता पर करारा चॉटा सा पड़ता है ।

**संवेदनहीनता :–** 'मिट्टी' कलयुगी सन्तानों की असलियत को बखूबी दिखाती लघुकथा है । इसमें मृत्युशैय्या पर पड़ी एक वृद्धा की बहू की पुरजोर कोशिश है कि मरने से पहले वह वृद्धा उस जेवर की जानकारी उसे दे दे जो घर के ही किसी कोने में गड़ा हुआ है । बेचारी वृद्धा चाहती है कि वह चैन से मर सके, कोई उसे रामायण बॉच के सुना दे लेकिन बहू का सारा ध्यान गहने–जेवर पर है जिसे वह वृद्धा के ऑख मूंदने से पहले–पहले अपने वश में कर लेना चाहती है। इसके लिए वह वृद्धा को जली–कटी सुना–सुनाकर विवश करती है, तड़पती हुई वृद्धा मर जाती है लेकिन बेटा, बहू और बच्चे गहनों की पोटली ढूंढने के लिए खुदाई करने में व्यस्त हैं । पोटली मिल जाने पर ही बहू वृद्धा के मरने का आर्तनाद करती है ।

**चरित्रहीनता :–** 'नाम' ऊॅचे घराने के पुरूषों के थोथे घमण्ड और चरित्रहीनता को दिखाती लघुकथा है । इसमें एक डोम स्त्री रतिया स्कूल में अपने बेटे का नाम गॉव के ठाकुरों जैसा लिखवा देती है तो सरपंच ठाकुर रिछपाल सिंह इसे अपनी जाति का अपमान समझ एक दिन अपने लठैतों के साथ उसके मुहल्ले में आकर हुॅकार भरते हुए उसे ललकारते हैं–"तुम्हारी सुअर–सी औलादों को स्कूल में संग बैठने–पढ़ने की सरकारी इजाजत क्या मिल गई कि तू मतऊ, दतऊ, धनकुआ, ईसुरी नाम छोड बामन, ठाकुरों के नाम रखने लगी? तेरा बेटा देवेन्द प्रताप सिंह हो गया तो तू हो गई उसकी महतारी ठकुराईन ××× नाबदान के कीड़े ऽऽ ... अगले ही पल ठाकुर रिछपाल सिंह ने दॉत पीसे–गनीमत इसी में है सालो ऽऽ ...अपनी औकात में रहो । बामन, ठाकुर बनने की कोशिश न करो ... वरना ..."[7] रतिया का ससुर ठाकुर साहब के सामने हाथ–पॉव जोड़ दया की भीख मॉगता हुआ क्षमायाचना करता है लेकिन ठाकुर के खूब गाली–गलौच करने पर रतिया इस सच से पर्दा उठा देती है कि उसका बेटा किसी ठाकुर की औलाद है । प्रमाण देने पर ठाकुर सन्नाटे में आ जाते हैं । ... बड़े लोगों, ऊॅचे वर्गों के जीवन का यह पक्ष बहुत घृणित होने के साथ–साथ उनकी चरित्रहीनता, उनके दोगले मानदण्डों को भी दर्शाता है । उनकी शान–ओ–शौकत बहुत खोखली लगती है जब पता चलता है कि उसके पीछे उनके कारण दबे–कुचले लोगों का शोषण छिपा रहता है । **'बयान'** भी इसी श्रेणी की अत्यन्त मार्मिक लघुकथा है ।

आधुनिक दौर में भी गरीब का शोषण जारी है लेकिन कहीं–कहीं पासा पलटने भी लगा है। लोकदिखावे की खातिर या अपने किसी बड़े लाभ की खातिर जो लोग भी **'सेवा'** अथवा सहायता करते हैं, उनके पात्र भी चालाक हो गए हैं, वे अपने फायदे के अनुसार सहायता का रूप बदल लेते हैं । एक सेर तो दूसरा सवा सेर साबित हो रहा हैं । बदलते जमाने के इस बदलते सच पर भी चित्रा जी की कुछ लघुकथाएॅ मिलती हैं, जैसे– **'पाठ'** और **'व्यावहारिकता'** । देने वाला सोचता है वह कुछ देकर महानता का हकदार हो जाएगा, अपना नाम कर लेगा, उसे भुना भी लेगा पर नहीं जानता जिसे दे रहा है; वह उस से

भी चालाक है, लेगा भी, अहसानमंद होगा; इसकी भी गारंटी नहीं, दी हुई चीज का प्रयोग भी करेगा, बिल्कुल पता नहीं– अर्थात् अजीब कशमकश है । **'पाठ'** लघुकथा में एक जनसेवक स्वास्थ्य मन्त्री चुनाव से पूर्व सतर्क होते हैं और अपने को बड़ा चालाक समझते हुए, जनता को बेवकूफ समझते हुए एक स्कूल में जाकर गंदे–मंदे बच्चों को साफ–सफाई का महत्त्व बताते हुए एक–एक बट्टी नहाने के साबुन की, एक–एक कपड़े धोने के और एक–एक खादी का अंगोछा बॅटवाते हैं । वे सोचते हैं कि स्वच्छता का पाठ पढ़ाकर और कुछ सामान बॅटवाकर वे समाज में क्रान्ति ले आएंगे और इसी आशा से महीने भर बाद पुनः उसी स्कूल का दौरा करते हैं तो बच्चे वैसे ही मैले–कुचैले मिलते हैं । निराश, हैरान जनसेवक एक बच्चे से जोर देकर कारण पूछते हैं तब वह बताता है, "साबुन की बट्टी ... बट्टी अऊर अंगोछा माई पंसारी की दुकनवा में ले जाके बेच आयी । ××× माई बोली ... बोली, सरकारो खूब मजाक करत है– नहा धोके पेट थोड़इ भरने वाला है ।"[8] 'व्यावहारिकता' ठीक इसी विषय पर अलग तरह से प्रकाश डालती रचना है ।

**धूर्तता :–** कभी समय था जब शत्रु के भी किसी श्रेष्ठ गुण को सराहा जाता था, उसका सम्मान किया जाता था । आधुनिक युग में सब मानदंड बदल रहे हैं । किसी ने हमारे साथ अच्छा भी किया हो तब भी बिल्कुल जरूरी नहीं है कि समय पड़ने पर वही अच्छाई उसे लौटाएंगे । नीचता इस कदर बढ़ गई है कि भले की भलाई भूलकर अपनी धूर्तता से मनुष्य बाज नहीं आता, इसी विषय को लेकर **'सेवा'** लघुकथा लिखी गई है । विदेश विभाग के बड़े अधिकारी के समक्ष उनका अधीनस्थ अधिकारी इसलिए नतमस्तक होता है क्योंकि उसकी कई वर्षों से रूकी पदोन्नति हो गई है । वह गद्गद् है और बड़े अधिकारी का अहसान उतारने के लिए कुछ भी करने को तैयार है । उसके बहुत आग्रह पर वे एक छोटा सा काम उसे देते हैं लेकिन उस काम को करने के बाद उपजी परिस्थितियों से भी वह बहुत बड़ा लाभ उठा ले जाता है, जो उसका कमीनापन दिखाता है। ऐसा करने वालों की संख्या आजकल बहुत बढ़ गई है । जो निस्संदेह शोचनीय है । यह सब देखकर लगता है जैसे प्रत्येक व्यक्ति व्यापारिक बुद्धि का हो गया है, कुछ भी करने के बदले उसको क्या लाभ मिलेगा, इसी उधेड़बुन में लगा रहता है । जीवन की सरलता लगभग गायब है।

यद्यपि अनेकानेक अन्य विषयों पर भी चित्रा जी ने लघुकथाएँ लिखी हैं लेकिन शोषण, दिखावा, चालाकी, धूर्तता जहॉ भी उन्हें दिखी, वहीं से उन्होंने उसे पकड़ लिया चाहे वह किसी भी पक्ष की हो अथवा किसी के प्रति भी हो । साहित्यकार का धर्म बहुत ईमानदारी से निभाने वाली रचनाकार हैं–चित्रा मुद्गल । डॉ. सतीश दुबे की टिप्पणी बहुत सार्थक और सटीक है–"चित्रा जी जीवन की क्षणिक घटनाओं और अनुभूतियों को छोटे–से कैनवास पर जिस बखूबी से चित्रित करती हैं, उनका यह चित्रण अपने परिवेश का ईमानदार दस्तावेज बन जाता है ।"[9]

चित्रा जी जैसे रचनाकारों के कारण ही लघुकथा एक सशक्त विधा के रूप में स्थापित हो पाएगी । **'नसीहत'** को राजस्थान की **'पलाश'** रंगकर्मी संस्था ने नाट्य प्रस्तुति के लिए चुना और विविध भारती के चित्रशाला कार्यक्रम में उनकी 'ऐब', 'सबक', 'सहयात्री', 'भूख', आदि लघुकथाएँ प्रसारित हुई है । विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में भी अनेकानेक लघुकथाएँ प्रकाशित हो रही हैं, इस तरह देखा जाए तो इस विधा का भविष्य उज्ज्वल ही है ।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

1. कौंध, बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 8–9
2. गरीब की मॉ, बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 18
3. भूखे, नंगे,बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 81
4. शहर,बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 46
5. राक्षस,बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 31
6. नम,बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 38

7. रक्षक–भक्षक, बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 54
8. पाठ, बयान, लेखिका– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या 66
9. परिशिष्ट, बयान, लेखक– डॉ. सतीश दुबे, पृष्ठ संख्या 94